Poonam Shodh Rachna(ISSN 2456-5563)
(A multidisciplinary, peer reviewed and refereed Research Journal)
Vol. 3, Issue.V, May 2024, PSR-2405002

हिन्दी भाषा का आदिकाल

डॉ० बृजेन्द्र सिंह
कार्यकारी निदेशक
कुन्द कुन्द कहान दिगम्बर जैन महाविद्यालय, कोटा

हिन्दी भाषा का आदिकाल

हिन्दी साहित्य पर अगर समुकति परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाए तो स्पस्ट होता है कि हिन्दी साहिन्य इतिहास अत्यंत विस्तृत व प्राचिन है। सुप्रसिद्ध भाषा विज्ञानिक डॉ. हरदेव बाहरी के शब्दों में हिन्दी साहित्य का इतिहास वस्तुतः वैदिक काल से आरम्भ होता है यह कहना ही ठीक होगा कि वैदिक भाषा ही हिन्दी है। इस भाषा का दुर्भागय रहा है कि युग–युग में इसका नाम परिवर्तित होता रहा है। कभी ' वैदिक' कभी ' संस्कृत ' कभी ' प्राकृत ' और अब – हिन्दी। (1) आलोचक कह सकते है कि 'वैदिक संस्कृत और 'हिन्दी' में तो जमीन–आसमान का अन्तर है। पर ध्यान देने योग्य है कि हिब्रू , रूसी, चीनी, जर्मन और तमिल आदि जिन भाषाओ को बहुत पुरानी बताया जाता है, उनके भी प्राचीन और वर्तमान रूपो में जमीन–आसमान का अन्तर है , पर लोगो ने उन भाषओ के नाम नही बदले और उनके परिवर्तित स्वरूपों को 'प्राचीन ' , मध्यकालीन , 'आधुनिक' आदि कहा गया, जबकि 'हिन्दी' के संन्दर्भ में प्रत्येक युग कि भाषा का नाम रखा जाता रहा। {2}

हिन्दी भाषा के उद्भव और विकास के सम्बन्ध मे प्रचलित धारणाओं पर विचार करते समय हमारे सामने हिन्दी भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न दसवीं शताब्दी के आसपास की प्राकृताभास तथा अपभ्रंश भाषओ की और जाता है। अपभ्रंग शब्द की व्युत्पत्ति और जैन रचाओ की अपभ्रंश कृतियो का हिन्दी से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जो तर्क और प्रमाण हिन्दी साहित्य के दतिहास ग्रन्थो में प्रस्तुत किये गये है उन पर विचार करना भी आवश्यक है। सामान्यतः प्राकृत की अन्तिम अपभ्रंग–अवस्थ से ही हिन्दी साहित्य का आविर्भाव स्वीकार किया जाता है। उस समय अपभ्रंग के कही रूप थे और उनमे सातवीं–आठवी से ही पद्य रचना प्रारम्भ हो गई थी।

साहित्य की दृष्टि से पद्यबद्ध जो रचना मिलती है वे दोहा रूप में ही हैं और उनके विषय , धर्म, निति, उपदेश आदि प्रमुख है। राजाश्रित कवि और चारण निति , शृंगार , पराक्रम आदि के वर्णन से अपनी साहित्य–रूचि का परिचय दिया करते थे। यह रचना–परम्परा आगे चलकर शौरसेनी अपभ्रंग या 'प्राकृतभस हिन्दी' में कही वर्षो तक चलती रही। पुरानी अपभ्रंग भषा और बोलचाल की देशी भाषा का प्रयोग निरन्तर बढता गया। इस भाषा को विद्यापति ने देशी भाषा कहा है, किन्तु यह निर्णय करना सरल नही है कि हिन्दी शब्द का प्रयोग इस भाषा के लिए कब और किस देश में प्रारम्भ हुआ।

अनुक्रम

हिन्दी साहितय का इतिहास–लेखन का इतिहास

हिन्दी साहित्य का इतिहास के इतिहासकार और उनके ग्रंन्थ

हिन्दी साहित्य के विकास के विभिन्न काल

आदिकाल (1050 ई. से 1375 ई.)

भक्तिकाल (1375 से 1700 ई.)

रीतिकाल (1700 से 1900 ई.)

आधुनिक काल (1900 से अब तक)

बीसवीं शताब्दी

हिन्दी एवं उसके साहित्य का इतिहास

बाह्मी लिपी का विकास

अपभ्रंग तथा आदि–हिन्दी का विकास

अपभ्रंग का अस्त तथा आधुनिक हिन्दी का विकास

आधुनिक हिन्दी

सन्दर्भ

इन्हे भी देखे

बाहरी कडियाँ

हिन्दी साहित्य के इतिहास–लेखन का इतिहास

मुख्य लेखः हिन्दी साहित्य के इतिहास का लेखन

आरंभिक काल से लेकर आधुनिक व आज की भाषा में आधुनिकोत्तर काल तक साहित्य इतिहास लेखकों के शताधिक नाम गिनाये जा सकते है। हिन्दी साहित्य के इतिहास शब्दबद्ध करने का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण था।

हिन्दी साहित्य के इतिहासकार और उनके ग्रन्थ

हिन्दी साहित्य के मुख्य इतिहासकार और उनके ग्रथ निम्नानुसार है–

1.गार्सा तासी : इस्तवार द ला लितेरात्यूर ऐंदुई ऐंदुस्तानी (फ्रेंच भाषा में; फ्रेंच विद्वान, हिन्दी साहित्य के पहले इतिहासकार);(1839)

2. मौलवी करीमुद्दीन : तजकिरा–ऐ–शुअराई, (1848)

3. शिवसिंह सेगर : शिव सिंह सरोज,(1883)

4. जार्जग्रियर्सन :द मॉडर्न वर्नेक्यूलर लिट्रैचर ऑफ हिंदोस्तार,(1888)

5 मिश्र बंधु : मिश्र बंधु विनोद(चार भागों में) भाग 1,2 और 3–(1913में) भाग4(1934 में)

6. एडविन ग्रीव्स : ए स्कैच ऑफ द्विहंदी लिटरेचर, (1917)

7. एफ. ई के महोदय : ए हिस्ट्री ऑफ हिंदी लिटरेचर (1920)

8 रामचंद्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास(1929)

9 हजारी प्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940); हिन्दी साहित्य का आदिकाल (1952); हिन्दी साहित्यः उद्भव और विकास (1955)

10. राकुमार वर्मा : हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (1938)

11. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य (तीन खण्डों में)

12. हिंदी साहित्य का बृहत इतिहास(सोलह खण्डों में)—1957 से 1984. तक।

13. डॉ. नरेन्द्र : हिंदी साहित्य का इतिहास (1973); हिन्दी वाड्मय 20 वीं शती

14. रास्वरूप चतुर्वेदी 5 हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास , लोकभारती प्रकाशन, 1986

15. बच्चन सिंह : हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाश्न, नई दिल्ली (1996)

16. डा. मोहन अवस्थी : हिन्दी साहित्य का अदयतन इतिहास

17. बाबू गुलाब राय : हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास

हिन्दी साहित्य के विकास के विभिन्न काल

हिन्दी साहित्य कर आरम्भ आठवी शताब्दी से माना जाता है। यह वह समय है जब सम्राट् हर्ष की मृत्यु के बाद देश में अनेक छोटे–छोटे शासनकेन्द्र स्थापित हो गये थे जो परस्पर संघर्षरत रहा करते थे। विदेशी मुस्लमानो से भी इनकी टक्कर होती रहती थी। धार्मिक क्षेत्र अस्तव्यस्त थे। इन दिनो उत्तर भारत के अनेक भागो मे बौद्ध धर्म का प्रचार था। बौद्ध धर्म का विकास कही रूपो मे हुआ जिनमें से अपने मत का प्रचार किया। हिन्दी का प्रचीनतम साहित्य इन्ही वज्रयानी सिद्धो द्वारा तत्कलीन लोकभाषा पुरानी हिन्दी में लिखा गया। इसके बाद नाथपंथी साधुओं का समय आता है। इन्होने बौद्ध, शांकर, तत्र, योग और शैव मतो के मिश्रण से अपना नया पंथ चलाया जिसमें सभी वर्गो और वर्णो के लिए धर्म का एक सामान्य मत प्रतिपादित किया गया था। लोकप्रचलित पुरानी हिन्दी में लिखी इनकी अनेक धर्मिक रचनाएँ उपलब्ध है। इसके बाद जैनियो की रचना मिलती है। स्वयंभ का '' पउमचरिउ ' अथवा रामायण आठवीं सताब्दी की रचना है। बौद्धो और नाथपंथियो की रचना मुक्तक और केवल धार्मिक है पर जैनियों की अनेक रचनाएँ जीवन की सामान्य अनुभूतियों से संबद्ध है। इनमें से कई काव्य है। इसी काल मै अब्दुर्रहमान का काव्य '' संदेशरासक भी लिखा गया जिसमें परवर्ती बोलचाल के निकट की भाषा मिलती है। इस प्रकार ग्यारहवी शताब्दी तक पुरानी हिन्दी का रूप निर्मित और विकसित होता रहा।

आदिकाल (1050ई से 1375 ई)

ग्यारहवी सदी के लगभग देशभाषा हिन्दी का रूप अधिक स्फुट होने लगा। उस समय पश्चिमी हिन्दी प्रदेश में अनेक छोटे–छोटे राजपुत राज्य स्थापित हो गए थे। ये परस्पर अथवा विदेशी आक्रमणकारियों से प्रायः युद्धरत रहा करते थे। इन्ही राजाओं के संरक्षण में रहने वाले चारणों और भाटों का राजप्रशस्तिमूलक काव्य वीरगाथा के नाम से अभिहित किया गया। इन वीरगाथाओं को रासो कहा जाता है। इनमें आश्रयदाता राजाओं के शौर्य और पराक्रम का ओस्वी वर्णन करने के साथ ही उनके प्रेमप्रसंगो का भी उल्लेख है। रासो ग्रन्थों में संघर्ष का कारण प्रायः प्रेम दिखाया गया है। इन रचनाओं में इतिहास और कल्पना का मिश्रण है। रासो वीरगीत (बीसलदेवरासो और आल्हा आादि) और प्रबंधकाव्य (पृथ्वीराजरासो, खुमानरासो आदि) – इन दो रूपों में लिखे गये। इन रासो ग्रन्थों में से अनेक की उपलब्ध प्रतियाँ चाहे ऐतिहासिक दृष्टि से संदिग्ध हों पर इन वीरगाथाओं की मौलिक परंपरा

असंदिग्ध है। इनमें शौर्य और प्रेम की ओजस्वी और सरस अभिव्यक्ति हुई है।

इसी कालवधि में मैथिल कोकिल विद्यापति हुए जिनकी पदावली में मानवीय सौंदर्य ओर की अनुपम व्यंजना मिलती हैं। कीर्तिलता और कर्तिपताका इनके दो अन्य प्रसिद्ध ग्रथ है। अमीर खुसरो का भी यही समय है। इन्होंने ठेठ खड़ी बोली में अनेक पहेलियाँ और दो सखुन रचे है। इनके गीतों, दोहों की ब्रजभाषा है। आदिकाल के प्रमुख कवि और उनकी रचनाँ अक्टुबर 02,2009 आज हम आदिकालीन कवियों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैः 1.अब्दुर्रहमान : संदेश रासक 2. नरपति नाल्ह : बीसलदेव रासो (अपभ्रंश हिंदी) 3. चदबरदायी : पृथ्वीराज रासो (डिंगल–पिंगल हिंदी) 4. दलपति विजय : खुलमान रासो (राजस्थानी हिंदी) 5. जगनिक : परमाल रासो 6. शार्गधर : हम्मीर रासो 7. नल्ह सिंह : विजयपाल रासो 8. जल्ह कवि : बुद्धि रासो 9. माधवदास चारण : रासो 10. देल्हण : गद्य सुकुमाल रासो 11. श्रीधर : रणमल छंद , पीरीछत रायसा 12. जिनधर्मसुरि : स्थूलिभद्र रास 13. गुलाब कवि : करहिया कौ रायसो 14. शालिभदगसूरि : भरतेश्वर बाहुअलिरास 15. जोइन्दु : परमात्म प्रकाश 16. केदार : जयचद प्रकाश 17. मधुकर कवि : जसमयंक चंद्रिका 18. स्वयंभू : 19. योगसार : सानयधम्म दोहा 20. हरप्रसाद शास्त्री : बौद्धगान और दोहा 21. लक्ष्मीधर : प्राकृत पैगलम 13. अमीर खुसरो : किस्सा चाहा दरवेश, खलिक बारी 24. विद्यापति : कीर्तिलता, कर्तिपताका, विद्यापति पदावली (मैथिल)

भक्तिकाल (1375 से 1700 ई)

मुख्य लेख : भक्ति काल

तेरहवी सदी तक धर्म के क्षेत्र में बड़ी अस्तव्यस्तता आ गई। जनता में सिद्धों और योगियों आदि द्वारा प्रचलित अंधविश्वास फैल रहे थे, शास्त्रज्ञानसंपन्न वर्ग में भी रूढियों और आंडंबर की प्रधानता हो चली थी। मायावाद के प्रवाद के प्रभाव से लोकविमुखता आंदोलन उठा जिसने समाज में उत्कर्षविधासयक सामाजिक और वैयक्तिक मूल्यों की प्रतिष्टा की।

भक्ति आंदोलन का आरंभ दक्षिण के आलवार सन्तों द्वारा दसवी सदी के लगभग हुआ। वहॉ शंकराचार्य के अद्वेतमत और मायावाद के विरोध में चार वैष्णव संप्रदाय खण्ड़े हुए। इन चारो संप्रदायो मे उत्तर भारत में विष्णु के अवतारो का प्रचार प्रसार किया। इनमें से एक प्रर्वतक रामानुजाचार्य थे, जिनकी शिष्यपंरमपरा में आने वाले रामानंद ने (प्रदहवी सद) उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रचार किया। रामानंद के राम ब्रहम के स्थानापन्न थे जो राक्षसों का विनाश और अपनी लीला का विस्तार करने के लिए संसार मे अवतीर्ण होते है। भक्ति के क्षेत्र में रामानंद ने ऊँचनीच का भेदभाव मिटाने पर विशेष बल दिया। राम के सगुण और निर्गुण दो रूपो को मानने वाले दो भक्तो– कबीर और तुलसी को इन्होने प्रभावित किया। विष्णुस्वामी के शुद्धाद्वैत मत का आधार लेकर इसी समय वल्लभाचार्य ने अपना पुष्टिमाग चलाया। बारहवी से सोलवी सदी तक पुरे देश में पुराणसम्मत कृष्णचरित के आधार पर कई संप्रदाय प्रतिष्ठित हुए , जिनमें सबसे ज्यादा प्रभावशाली वल्लभ का पुष्टिमार्ग था। उन्होने शांकर मत के विरूद्ध ब्रहम के सगुण रूप को ही वास्तविक कहा। उनके मत से यह संसार मिथ्या या माया का प्रसार नही है बल्कि ब्रहम का ही प्रसार है, अतः सत्य है। उन्होने कृष्ण को ब्रहम का अवतार माना और उसकी प्राप्ति के लिए भक्त का पूर्ण आत्मसर्मपण आवश्यक बतलाया। भगवान् के अनुग्रह या पुष्टि के द्वारा ही भक्ति सुलभ हो सकती है। इस संप्रदाय में उपासना के लिए गोपीजनवल्लभ , लीलापुरूषोत्तम कृष्ण का मधुर स्वीकृत हुआ । इस प्रकार उत्तर भारत में विष्णु के राम और कृष्ण अवतारो प्रतिष्ठा हुई।

इस प्रकार इन विभिन्न मतो का आधार लेकर हिन्दी में निर्गुण और सगुण के नाम से भक्तिकाव्य की दो शाखाएँ साथ साथ चली।

निर्गुणमत के दो उपविभाग हुए– ज्ञानाश्रयी। पहले के प्रतिनिधि कबीर और दुसरे के जायसी है। सगुणमत भी दो उपधारोंऔ में प्रवाहित हुआ– रामभक्ति और कृष्णभक्ति। पहले के प्रतिनिधि तुलसी है और दुसरे के सूरदास।

ज्ञानश्रयी शाखा के प्रमुख कवि कबीर पर तात्कालिक विभिन्न धार्मिक प्रवृत्तियों और दार्शनिक मतों का सम्मिलित प्रभाव है। उनकी रचनाओं में धर्मसुधार और समाजसुधारक का रूप विशेष प्रखर है। उन्होने आचरण की शुद्धता पर बल दिया। बाहयाडंबर, रूढियों और अधविश्वासों पर उन्होने तीव्र कशाघात किया। मनुष्य की क्षमता का उद्घोष कर उन्होने निम्न श्रेणी की जनता में आत्मगौरव का भाव जगाया। इस शाखा के अन्य कवि रैदास, दादू है।

प्रेमाश्रयी धारा के सर्वपमुख्य कवि जायसी है जिनका ''पदामावत' अपनी मार्मिक प्रेमव्यंजना, कथारस और सहज कलाविन्यास के कारण विशेष प्रशसित हुआ है। इनकी अन्य रचनाऔं में ''अखरावट' और ''आखिरी कलाम' आदि है, जिनमें सूफी संप्रदायसंगत बाते है। इस धारा के अन्य कवि है कुतुबन, मंझन, उसमान, शेख नबी और नूर मुहम्मद आदि।

आज की दृष्टि से इस संपूर्ण भक्तिकाव्य का महत्व उसकी धार्मिक लोकजीवनगत मानवीय अनुभूतियों और भावों के कारण हैं। इसी विचार से भक्तिकाल को हिन्दी काव्य का स्वर्ण युग कहा जाता है।

रीतिकाल (1700 से 1900 ई.)

१७०० के आस–पास हिन्दी कविता में एक नया मोड़ आया। इसे विशेषता :तात्कालिनक दरबारी संस्कृति साहित्य से उत्तेजना मिली। संस्कृत साहित्यशास्त्र के कतिपय अंशो ने उसे शास्त्रीय अुसाशन की और प्रवृत्त किया। हिन्दी में रीति या 'काव्यरीति' शब्द का प्रयोग काव्यशास्त्र के लिए हुआ था। इसलिए काव्यशास्त्रबद्ध सामान्य सृजनप्रवृत्ति और रस, अंलकार आदि के निरूपक बहुसंख्यक लक्षणग्रन्थों को ध्यान में रखते हुए इस समय के काव्य कों 'रीतिकाव्य' कहा गया। इस काव्य की शृंगारी प्रवृत्तियों की पुरानी पंरपरा के स्पस्ट संकेत संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी और हिन्दी के आदिकाव्य तथा कृष्णकाव्य की शृंगारी प्रवृत्तियों में मिलते है।

रीतिकाव्य रचना का आरंभ एक संस्कृतज्ञ ने किया। ये आचार्य केशवदास, जिनकी सर्वप्रसिद्ध रचनाएँ कविप्रिया, रसिकप्रिया और रामचंद्रिका है। केशव के कई दशक बाद चिन्तामणि से लेकर अठारहवी सदी तक हिन्दी में रीतिकाव्य का अजस्र स्रोत प्रवाहित हुआ जिसमें नर–नारी–जीवन के रमणीय पक्षें और तत्संबंधी सरस संवेदनाओं की सरस संवेदनाओं की अत्यंत कलात्मक अभिव्यक्ति व्यापाक रूप में हुई।

रीतिकाल के कवि राजाओं और रईसों के आश्रय में रहते थे। वहाँ मनोरंजन और कलाविलास का वातावरण स्वाभाविक था। बौद्धिक आनंद का मुख्य साधन वहाँ उक्तिवैचिन्त्र्य समझा जाता था। ऐसे वातावरण में लिखा गया साहित्य अधिकतर शृंगारमूलक और कलावैचिन्त्र्य से युक्त था। पर इसी समय प्रेम के स्वच्छंद गायक भी हुए जिन्होंने प्रेम की गहराइयों का स्पर्श किया है। मात्रा और काव्यगुण दोनों ही दृष्टियों से इस समय का नर–नारी और सौंदर्य की मार्मिक व्यंजना करनेवाला काव्यसाहित्य महत्वपूर्ण है। रीतिकाव्य मुख्यतः मासल शृंगार का काव्य है। इसमें नर–नारीजीवन के स्मरणीय पक्षों का सुंदर उद्घाटन हुआ है। अधिक काव्य मुक्तक शैली में है, पर प्रबंधकाव्य भी हैं। इन दो वर्षो में शृंगारकाव्य का अपूर्ण उत्कर्ष हुआ। पर धीरे धीरे रीति की जड़क बढ़ती गई और हिन्दी काव्य का भावक्षेत्र सकीर्ण होता गया। आधुनिक युग तक आते आते इन दोनों कमियों की ओर साहित्यकारों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ।

आधुनिक काल (1900 से अब तक)

इन्हें भी देखें –

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल,

आधुनिक हिंदी पद्य का इतिहास,

आधुनिक हिंदी गद्य का इतिहास

उन्नीसवीं शताब्दी

यह आधुनिक युग का काल है जब भारतीयों का यूरोपीय संस्कृति से संपर्क हुआ। भारत ने अपनी जड़े जमाने के काम में अँगरेजी शासक ने भारतीय जीवन को विभिन्न स्तरों पर प्रभावित और आंदोलित किया। नई परिस्थितियों के धक्के से स्थितिशील जीवनविधि का ढाँचा टूटने लगा। एक नए युग की चेतना का आंरभ हुआ। संघर्ष और सामंजस्य के नए आयाम सामने आए।

नये युग के साहित्यसृजन की सर्वोच्च संभावनाएँ खडी बोली गद्य में निहित थी, इसलिए इसे गद्य–युग भी कहा जाता है। हिन्दी का प्राचीन गद्य राजस्थानी, मैथिली और ब्रजभाषा में मिलता है पर वह साहित्य का व्यापाक माध्यम बनने में अशक्त था। खड़ीबोली की परंपरा प्राचीन है। अमीर खुसरों से लेकर मध्यकालीन भूषण तक के काव्य में इसके उदारण बिखरे पड़े है। खड़ी बोली गद्य के भी पुराने नमूने मिले है। इस तरह का बहुत सा गद्य फारसी और गुरूमुखी लिपी में लिखा गया है। दक्षिण की मुसलमान रियासतो में ''दक्खिनी' के नाम से इसका विकास हुआ। अठारहवी सदी में लिखा गया रामप्रसाद निरंजनी और दौलतराम का गद्य उपलब्ध हैं। पर नयी युगचेतना के संवाहक रूप में हिन्दी के खडी बोली गद्य का व्यापाक प्रसार उन्नीसवी सदी से ही हुआ। कलकत्ते के फोर्ट विलियम कालेज में, नवागत अँगरेज अफसरों के उपयोग के लिए, लल्लू लाल तथा सदल मिश्र ने गद्य की पुस्तकें लिखकर हिन्दी के खडी बोली गद्य की पूर्वपंरपरा के विकास में कुछ सहायता दी । मुशी सदासुखलाल और इंशा अल्ला खा की गद्य की रचनाएँ इसी समय लिखी गई। आगे चलकर प्रेस , पत्रपत्रिकाओं, ईसाई धर्मप्रचारकों तथा नवीन शिक्षा संस्थाओं से हिन्दी गद्य के विकास में सहायता मिली। बंगााल, पंजाब, गुजरात आदि विभिन्न प्रान्तों के निवासियों ने भी इसकी उन्नति और प्रसार में योग दिया। हिन्दी का पहला समाचारपत्र '' उदत मार्तण्ड' १८२६ ई. में कलकत्ते से प्रकाशित हुआ। राजा शिवप्रसाद और राजा लक्ष्मण सिंह हिन्दी गद्य के निर्माण और प्रसार में अपने अपने ढंग से सहायक हुए। आर्यसमाज और अन्य सांस्कृतिक आदोंलनों ने भी आधुनिक गद्य को आगे बढ़ाया।

गद्यसाहित्य की विकासमान परंपरा उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध से अग्रसर हुई। इसके प्रर्वतक आधुनिक युग के प्रर्वतक और पथप्रदर्शक **भारतेंदु हरिश्चंद्र** थे जिन्होने साहित्य का समकालीन जीवन से घनिष्ठ संबध स्थापित किया। यह संक्राति और नवजागरण का युग था। अँगरेजों की कूटनीतिक चालों और आर्थिक शोषण से जनता संत्रस्त और क्षुब्ध थी। समाज का एक वर्ग पाश्चात्य संस्कारों से आक्रांत हो रहा था तो दुसरा वर्ग रूढियों में जकड़ा हुआ था। इसी समय नई शिक्षा का आरंभ हुआ। और सामाजिक सुधार के आंदोलन चले। नवीन ज्ञान विज्ञान के प्रभाव से नवशिक्षितों मे जीवन के प्रति एक नया दृष्टिकोण विकसित हुआ। जो अतीत की अपेक्षा वर्तमाान और भविष्य की और विशेष उन्नमुख था। सामाजिक विकास में उत्पन्न आस्था और जाग्रत समुदायचेतना ने भारतीयों में जीवन के प्रति नया उत्साह उत्पन्न किया। भारतेंदु के समकालीन साहित्य में विशेषतः गद्यसाहित्य में तत्कालीन वैचारिक और भौतिक परिवेश की विभिन्न अवस्थाओं की स्पस्ट और जीवन्त अभिव्यक्ति हुई। इस युग की नवीन

रचनाएँ देशभक्ति और समाजसुधार की भावना से परिपूर्ण है। अनेक नई परिस्थितियों की टकराट से राजनीतिक और सामाजिक व्यर्ग की प्रव्त्ति भी उद्बुद्ध हुई। दस समय के गद्य में बोलचाल की सजीवेता है। लेखको के व्यक्तित्व से संपृक्त होने के कारण उसमें प्राप्त रोचकता आ गयी है। सबसे अधिक निबंध लिखे गये जो व्यक्तिप्रधान तथा वर्णनात्मक भी थे। अनेक शैलियो में कथासाहित्य में भी लिखा गया, अधिकतर शिक्षाप्रधान। पर यथार्थवादी दृष्टि और नए शिल्प की विशिष्टता श्रीनिवास दास के ''परीक्षागुरू' में ही है। देवकीनन्दन खत्री का तिलस्मी उपन्यास 'चंद्रकांता' इसी समय प्रकाशित हुआ। पर्याप्त परीणाम में नाटकों और सामाजिक प्रहसनों की रचना हुईं। भारतेंदु प्रतानारायण मिश्र, श्रीनिवास दास आदि प्रमुख नाटककार है। साथ ही भक्ति और क्षृंगार की बहुत सी सरस कविताएँ भी निर्मित हुई। पर जिन कविताओं में सामाजिक भावो की अभिव्यक्ति हुई वे ही नये युग की सूरजनशीलता का आंरभिक आभास देती है। खड़ी बोली के छिटफुट प्रयोगों को छोड़ शेष कविताएँ ब्रजभाषा में लिखी गयी। वास्तव में नया युग इस समय के गद्य में ही अधिक प्रतिफलित हो सका।

बीसवीं शताब्दी

इस कालावधि की सबसे महत्वपूर्ण धटनाएँ दो है– एक तो सामान्य काव्यभाषा के रूप में खड़ी की स्वीकृति और दूसरे हिन्दी गद्य का नियमन और परिमार्जन। इस कार्य सर्वाधिक सशक्त योग ससस्वती संपादक महावीरप्रसाद द्विवेदी का था। द्विवेदी जी और उनके सहकर्मियों ने हिन्दी गद्य की अभिव्यक्तिक्षमता को विकसित किया। निबंध के क्षेत्र में द्विवेदी जी के अतिरिक्त बालमुकंद, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, पूर्णसिह, पद्मसिंह, शर्मा जैसे एक से एक सावधान, सशक्त और जीवंत गद्यशैलीकार सामने आए। उपन्यास अनेक लिखे गए पर उसकी यथार्थवादी पंरपरा का उल्लेखनीय विकास न हो सका। यथार्थपरक आधुनिक कहानियाँ इसी काल मे जनमी और विकासमान हुई। गुलेरी, कौशिक आदि के अतिरिक्त पेमचंद और प्रसाद की भी आरंभिक कहानियाँ इसी इसी समय प्रकाश में आई। नाटक का क्षेत्र अवश्य सूना सा रहा। इस समय के सबसे प्रभावशाली समीक्षक द्विवेदी जी थे जनकी संशोधनवादी और मर्यादानिष्ठ आलोचना ने अनेक समकालीन साहित्य को पर्याप्त प्रभावित किया। मिश्रबंधु, कृष्णबिहारी मिश्र और पद्मसिंह शर्मा इस समय के अन्य समीक्षक है पर कुल मिलाकर इस समय की समीक्षा बाहयपक्षप्रधा ही रही।

सुधारवादी आदशों से प्रेरित अयोध्यासिंह उपाध्याय ने अपने ''प्रियप्रवास' में राधा का लोकसेविका रूप प्रस्तुत किया और खडीबोली के विभिन्न रूपों के प्रयोग में निपुणता भी प्रदर्शित की। मैथिलीशरण गुप्त ने ''भारत भारति' में राष्ट्रियताा और समाजसुधार का स्वर ऊँचा किया और ''सांकेत' में उर्मिला की प्रतिष्ठा की। इस समय के अन्य कवि द्विवेदी जी, श्रीधर पाठक, बालमुकुद गुप्त , नाथूराम शर्मा 'शंकर', गया प्रसाद शक्ल 'सनेही' आदि है। ब्रजभाषा काव्यपरंपरा के प्रतिनिधि रत्नाकर और सत्यनारायण कविरत्न है। इस समय खड़ी बोली काव्यभाषा के परिमार्जन और सामयिक परिवेश के अनुंरूप का कार्य संपन्न हुआ। नए काव्य का अधिकांश विचारपरक और वर्णनात्मक है।

सन् १६२०–४० के दो दशको मे आधुनिक साहित्य के अंतर्गत वैचारिक और कलात्मक प्रवृत्तियों का अनेक रूप उत्कर्ष दिखाई पडा। सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यास और कहानी को मिली। कथासाहित्य में घटनावैचित्य की जगह जीते जागते स्मरणीय चरित्रों की सृष्टि हुई। निम्न और मध्यवर्गीय समाज के यथार्थपरक चित्र व्यापाक रू॰ में प्रस्तुत किए गए। वर्णन की सजीव शैलियों का विकास हुआ। इस समय के सर्वप्रमुख कथाकार प्रेमचंद है। वृंदावनलाल वर्मा के एतिहासिक उपन्यास भाी उल्लेख्य है। हिन्दी नाटक इस समय जयशंकर प्रसाद के साथ सृजन के नवीन स्तर पर आरोहण करता है। उनके रोमांटिक ऐतिहासिक नाटक अपनी

जीवन चारित्र्यसृष्टि, नाटकीय संघषों की योजना और संवेदनीयता के कारण विशेष महत्व के अधिकारी हुए। कई अन्य नाटककार भी सक्रिय दिखाई पड़े। हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल ने सूर, तुलसी और जायसी की सूक्ष्म भावस्थितियों और कलात्मक विशेषताओं का मार्मिक उद्‌घाअक किया ओर साहित्य के सामाजिक मूल्यों पर बल दिया। अन्य आलोचक है श्री नंददुलारे वाजपेयी, डा़ नगेंद्र तथा डा़ हाजारीप्रसाद द्‌विवेदी।

काव्य के क्षेत्र में यह छायावाद के विकास का युग है। पूर्ववर्ती काव्य वस्तुनिष्ट था, छायावादी काव्य भावनिष्ठ है। इससे व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का प्राधान्य है। स्थूल वर्णन विवरण के स्थान पर छायावादी काव्य में व्यक्ति की स्वच्छंद भावनाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई। स्थूल तथ्य और वस्तु की अपेक्षा बिंबविधायक कल्पना छायावादीयों को अधिक प्रिय है। उनकी सौदर्यचेतना विशेष विकसित है। प्रकृतिसौंदर्य ने उन्हें विशेष आकृष्ट किया। वैयक्तिक संवेगों की प्रमुखता के कारण छायावादी काव्य मूलतः प्रगीतात्मक है। इस समय खड़ी बोली काव्यभाषा की अभिव्यक्तिक्षमता का अपूर्ण विकास हुआ। जयशंकर प्रसाद, माखनलाल , सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी ''निराला', महादेवी, नवीन और दिनकर छायावाद के उत्कृष्ट कवि है।

सन् १२४० के बाद छायावाद की संवेगनिष्ठ, सौंदर्यमूलक और कल्पनाप्रिय व्यक्तिवाद प्रवृत्तियों के विरोध में प्रगतिवाद का संघबद्ध आदोलन चला जिसकी दृष्टि समाजबद्ध, यथार्थवादी और उपयोगितावादी है। सामाजिक वैषम्य और वर्गसंघर्ष का भाव इनमें विशेष मुखर हुआ। इसने साहित्य को सामाजिक क्रांति के अस्त्र के रूप में ग्रहण किया। अपनी उपयोगितावादी दृष्टि की सीमाओं के कारण प्रगतिवादी साहित्य, विशेषतः कविता में कलात्मक उत्कर्ष की संभावनाएँ अधिक नही थी, फिर भी उसने साहित्य के सामाजिक पक्ष पर बल देकर एक नयी चेतना जाग्रत की।

प्रगतिवादी आंदोलन के आरंभ के कुछ ही बाद नये मनोविश्लेषणशास्त्र से प्रभावित एक और व्यक्तिवादी प्रवृत्ति साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय हुई थी जिसे सन १९४३ के बाद प्रयोगवाद नाम दिया गया। इसी का संशोधित रूप वर्तमानकालीन नयी कविता और नई कहानियाँ हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि द्‌वितीय महायुद्ध और उसके उत्तरकालीन साहित्य में जीवन की विभीषिका, कुरूपता और असंगतियों के प्रति अंसतोष तथा क्षोभ ने कुछ आगे पीछे दो प्रकार की प्रवृत्तियों को जन्म दिया। एक का नाम प्रगतिवादी है, जो मार्क्स के भौतिकवादी जीवनदर्शन से प्रेरणा लेकर चला; दूसरा प्रयोगवाद है, जिसने प्ररंपरागत आदर्शों और संस्थाओं के प्रति अपने अंसतोष की तीव्र प्रतिक्रियाओं को साहित्य के नवीन रूपगत प्रयोगों के माध्यम से व्यक्त किया। इसपर नए मनोविज्ञान का गहरा प्रभाव पड़ा।

प्रगतिवाद से प्रभावित कथाकारों में यशपाल, उपेद्रनाथ अश्क, अमृतलाल नागर और नागार्जुन आदि विशिष्ट है। आलोचकों में रामविलास शर्मा, नामवर सिंह, विजयदेव नारायण साही प्रमुख है। कवियों में केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, रांगेय राघव, शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि के नाम प्रसिद्ध है। निबन्ध विधा में इस दौर में आछार्य हजारीप्रसाद द्‌विवेदी, विद्‌या निवास मिश्र और कुबेरनाथ राय ने विशेष ख्याति अजित की।

नए मनोविज्ञान से प्रभावित प्रयोगों के लिए सचेष्ट कथाकारों में अज्ञेय प्रमुंख है। मनोविज्ञान से गंभीर रूप में प्रभावित इलाचंद्र जोशी और जैनेंद्र है। इन लेखकों ने व्यक्तिमन के अवचेतन का उद्‌घाटन कर नया नैतिक बोध जगाने का प्रयत्न किया। जैनेंद्र और अज्ञेय ने कथा के परंपरागत ढाँचे को तोड़कर शैलीश्रिल्प संबंधी नए प्रयोग किए। परवर्ती लेखकों और कवियों में वैयक्तिक

प्रतिक्रियाएँ अधिक प्रखर हुईं। समकालीन परिवेश से वे पूर्णतः संसक्त है। उन्होने समाज और साहित्य की मान्यताओं पर गहरा प्रश्नचिह्न लगा दिया है। व्यक्तिजीवन की लाचारी, कुठा, आक्रोश आदि व्यक्त करने के साथ ही वे वैयक्तिक स्तर पर नए जीवन मूल्यों के अन्वेषण में लगे हुए हैं। उनकी रचनाओं में एक और सार्वभौम संत्रास और विभाषिका की छटपटाहत है तो दूसरी और व्यक्ति के अस्तित्व की अनिवार्यता और जीवन की संभावनाओं को रेखांकित करने का उपक्रम भी। हमारा समकालीन साहित्य आत्यंतिक व्यक्तिवाद से ग्रस्त है और यह उनकी सीमा है। पर उनका सबसे बड़ा बल उनकी जीवनमयता है जिसमें भविष्य की संभावनाएँ निहित है।

हिन्दी एवं उनके साहित्य का इतिहास

- ७५० ईसा पुर्व – संस्कृत का वैदिक संस्कृत के बाद क्रमबद्ध विकास।
- ५०० ईसा पुर्व – बौद्ध तथा जैन की भाषा प्राकृत का विकास (पूर्वी भारत)।
- ४०० ईसा पुर्व – पाणिनि ने संस्कृत व्याकरण लिखा (पश्चिमी भारत)। वैदिक संस्कृत से पाणिनि की काव्य संस्कृत का मानकीकरण।

ब्रह्मी लिपी का विकास

- पाँचवी सदी ईसा से पहले – भारत में ब्रह्मी लिपी का विकास। (3)
- पाँचवी सदी ई० पू० से ३५० – ब्रह्मी लिपी का ज्ञात प्रयोग काल। (4)
- ३२० ई० (के आसपास) – ब्रह्मी लिपी से गुप्त लिपि का विकास।
- छठी सदी ईस्वी – सिद्धमात्रिका लिपि का गुप्त लिपि की पश्चिमी शाखा की पूर्वी उपशाखा से विकास। इसे न्यूनकोणीय लिपि भी गया है। (5)

अपभ्रंश तथा आदि–हिन्दी का विकास

- **प्रथम सदी ई. पू. /५वी सदी ई.**– कालिदास ने 'विक्रमोर्वशीयम्' में अपभ्रंश का प्रयोग किया।
- **५५०ई.**– वल्लभी के दर्शन में अपभ्रंश का प्रयोग।
- **७७१**– सिद्ध सरहपाद (जिन्हें कई लोग हिन्दी का पहला कवि मानते है) ने 'दोहाकोश' लिखा।
- **८००**– संस्कृत में बहुत सी रचनाएँ लिखि गयी ।
- **१३३**– देवसेन की ' सावयधम्म दोहा' (श्रावकधर्म दोहा या श्रावकाचार){कुछ लोग इसे भी हिन्दी की पहली पुस्तक मानते है।}(6)।
- **११००**– आधुनिक देवनागरी लिनि का प्रथम स्वरूप।
- **११४५–१२२१**– हेमचंद्राचार्य ने सिद्ध हेम शब्दानुशान नामक अपभ्रंश– व्याकरण की रचना की।

अपभ्रंश का अस्त तथा आधुनिक हिन्दी का विकास

- ११७४ ई० – शालिभद सूरि रचित भरतेश्वर बाहुबलि रास २०५ छंदों का आकार में छोटा परंतु शब्द–चयन एवं भाव सभी दृष्टियों सें अत्यंत उत्तम काव्य हैं।(7) पुष्ट तर्को से यही हिन्दी की पहली रचना सिद्ध होती है।(8)
- **१२५३–१३२५**– अमीर खुसरो की पहेलियों तथा मुकरियों में ''हिन्दवी'' शब्द का सर्वप्रथम उपयोग।
- **१३७०**–''हसाउली''(हंसावली) के कवि असाइत ने प्रेम कथाओं की शुरुआत की।
- **१३११–१५१२**– कबिर की रचनाओं ने निर्गुण भक्ति की नीव रखी।(9)
- **१४००–१४७१**– अपभ्रंश के आखिरी महान् कवि रइधू।
- **१४५०**– रामानन्द के साथ '' सगुण भक्ति'' की शुरूआत ।
- **१५८०**– शुरूआती दक्खिनी का कार्य '' कालमितुल हकायत''–बुरहानुहीन जानत द्वारा।
- **१५८५**– नाभादास ने '' भक्तमाल'' लिखी।
- **१६०१**– बनारसीदास ने हिन्दी की पहली आत्मकथा '' अर्ध ग्रथ'' निकाला ।
- **१६०४** – गुरू अर्जुन देव ने कई कवियों की रचानाओं का संलन ''आदि ग्रथ'' निकाला।
- **१५३२–१६२३** – गोस्वामी तुलसीदास ने '' रामचरित मानस'' की रचना की।
- **१६२३** – जटमल ने ''गोरा बादल री बात''(कुछ लोगों के विचार से खड़ी बोली की पहली रचना) लिखी।
- **१६४३** – आचार्य केशव दास ने ''रीति'' के द्वारा काव्य की शुरूआत की।
- **१६४५** – उर्दू का आरंम।

आधुनिक हिन्दी

- **१७१६** – देनागरी रचनाओं की शुरूआती छापाई।
- **१८२६** – ''उदन्त मार्तण्ड'' हिन्दी का पहला साप्ताहिक।
- **१८३७** – ओम् जय जगदीश के रचयिता श्रद्धाराम फुल्लौरी का जन्म।
- **१८६८** – राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' का लिपि सम्बन्धी प्रतिवेदन – फारसी लिपि के स्थान पर नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के लिए पहला प्रयास राजा शिवप्रसाद का उनके लिपि सम्बन्धी प्रतिवेदन कोर्ट कैरेक्टर इन द अपर प्रोविन्स ऑफ इंडिया से आरम्भ हुआ।
- **१८७७** – अयोध्या प्रसाद खत्री का हिन्दी व्याकरण, (बिहार बन्धु प्रेस)
- **१८८१** – वर्ष १८८१ ई. तक आते–आते उत्तर प्रदेश के पडोसी प्रान्तों बिहार, मध्य प्रदेश में नागरी लिपि और हिन्दी प्रयोग की सरकारी आज्ञा जारी हो गई तो उत्तर प्रदेश में नागरी आंदोलन को बड़ा नैतिक प्रोत्साहन मिला।
- **१८१३**– काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना।
- **१ मई१११०** – नागरी प्रचारिणी सभा के तत्वाधान में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई।

- **११५०** – हिन्दी भारत की राजभाषा के रूप स्थापित।
- **१०–१४ जनवरी ११७५** – नागपुर में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित।
- **दिसम्बर, ११७३** – मॉरीशस मे चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मलेन तथा उसके बाद विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना।
- **११७७** – वर्धा में महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना का अधिनियम संसद द्वारा पारित।
- **२०००** – आधुनिक हिन्दी का अन्तरराष्ट्रीय विकास।

सन्दर्भ

1. हिन्दी – उद्भ विकास और स्वरूपः अष्टम संस्करण,११८४, पृष्ट–१५.
2. मूलतः यह विचार डॉ. हरदेव बाहरी का निजी विचार हैं और कारणें से इससे सहमत होना संभव नही है। डॉ. बाहरी ने यहॉ आर्य भाषा के पर्याय रूप में हिंदी का प्रयोग किया है। ध्याातव्य है कि उस समय न तो इस देश का नाम हिंद या हिंदुस्थान हुआ था और न ही भाषा का नाम हिंदी। हिंद या हिंदू शब्द का आविष्कार ही नही हुआ था। अन्य देशों या प्रदेशों की भाषाएँ देश जाति के नाम पर आधारित है और उनमें रूप परिर्वतन जितने भी हुए हो, प्रकृति गत परिवर्तन प्रायः नही हुए है। फिर भी नामों में अंतर रहा है। चीनी की भी अनेक बोलियाँ है और उनके नाम अलग–अलग है– मंदारिन, फूचो, अमोयी, निंगपो, स्वातो, वेन्चो, मेहससीन तथा कैंटनी। पीपिं या उत्तरी मंदारिन का कुओयू रूप चीन की राष्ट्रभाषा है। कहने को ये सभी चीनी की बोलियाँ है किंतु इनमें आपस में दो भाषाओं (जैसे अग्रेंजी और डच) जितना अंतर है। परिणामस्वरूप नाम भी अलग हैं। समूह रूप मे ंतो ही सब का वर्गीकरण किया जाता है। अंग्रजी का विकास भी जर्मन और जर्मनी के द्वारा ही हुआ है, परंतु नाम जर्मनी नही रहा। ऐसे अनेक कारण है। भाषा का बहुआयामी तथा बहु प्रकृतिगत विकास भी भारत की तरह सर्वत्र नही हुआ है। और वैदिक भाषा को हिन्दी कहने से भारत की तो सभी भाषाओं को हिन्दी मानना ही होगा। जहाँ तक संभव है वहा तक काफी परिवर्तन के बावजूद हिन्दी के विभिन्न रूपों को (शालिभद्र सूरि, चन्द, खुसरो, विद्यापति, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा की भाषा से लेकर जयशंकर प्रसाद के चित्राधार से लेकर कामायनी तक की अत्यंत भिन्नतापूर्ण भाषा –रूपो को) भी हिन्दी ही स्वाभाविक रूप से कहा जा रहा हैः और इन्ही का इतिहास 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' है।
3. भाषा विज्ञान कोश, डॉ. भोलानाथ तिवारी, ज्ञानमंडल लिमिटेउ, वराणसी, संस्करण–1963ई.पृ.421.
4. भाष विज्ञान कोश, डॉ. भोलानाथ तिवारी, पूर्ववत् पृ.–422.
5. भाषा विज्ञान कोश, डॉ. भोलानाथ तिवारी, पूर्ववत् पृ.–704.
6. ''संग्रहीत प्रति'' मूल से 4 जनवरी 2018 को पुरा

लेखित. अभिगमन तिथि 21 दिसंबर 2017.

7. हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास, तृतीय भाग, संपादन– प. करूणापति त्रिपाठी एवं डॉ वासुदेव सिंह, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण–1983, पृष्ट 320.

8. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, प्रथम खण्ड, डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्ता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2001, पृ.67–70.
9. प्रमुख तिथि/वर्ष

इन्हें भी देखें

- हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ रामचन्द्र शुक्ल की अमर रचना
- हिन्दी पत्रकारिता
- हिन्दी भाषा का इतिहास

Poonam Shodh Rachna